

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 7 अध्याय 10: प्रह्लाद का वरदान

14 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



भगवान् ने बालक को वह सब देने का प्रस्ताव किया जो वह चाह सकता था। बदले में प्रह्लाद ने जो माँगा वह हर सच्चे भक्त की कसौटी बन गया है: न धन, न शक्ति, न स्वर्ग भी — अपितु एक ऐसा हृदय जिसमें कामना फिर कभी जड़ न पकड़े।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में बालक प्रह्लाद ने भगवान् नृसिंह को शुद्ध प्रेम की प्रार्थना से शान्त किया; सप्तम स्कन्ध का यह दशम अध्याय उस मिलन को उसके कोमल समापन तक ले आता है, और नारद के अनेक जन्मों में फैले एक रहस्य के रहस्योद्घाटन पर समाप्त होता है।

अध्याय-पारेचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 7 (सप्तम स्कन्ध)
- अध्याय: 10
- अध्याय-शीर्षक: प्रह्लाद, भक्तों में श्रेष्ठ
- मुख्य वक्ता: देवर्षि नारद, सम्राट युधिष्ठिर को कथा सुनाते हुए; भगवान् तथा प्रह्लाद के वचनों सहित
- मुख्य श्रोता: सम्राट युधिष्ठिर
- मुख्य स्थान: हिरण्यकशिपु का दरबार, भगवान् नृसिंह के सम्मुख
- मुख्य विषय-वस्तु: भगवान् का वरदान का प्रस्ताव, प्रह्लाद का कामनारहित उत्तर तथा पिता के लिए प्रार्थना, उसका राज्याभिषेक, और भगवान् के शापित द्वारपालों की छिपी कथा
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 7, अध्याय 10, श्लोक 1–70; प्रह्लाद-प्रसंग — अस्वीकृत वरदान, पिता के लिए प्रार्थना, राज्याभिषेक, तथा जय-विजय का नारद-रहस्योद्घाटन — श्लोक 1–43 में समाहित है
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

वरदानों का प्रस्ताव

वरदान देने को ही शुद्ध भक्ति में बाधा मानकर, बालक प्रह्लाद मुस्कराया और कोमलता से भगवान् को उत्तर दिया। “मुझे प्रलोभन न दें,” उसने कहा, “उन्हीं विषय-सुखों से जिनसे मैं जन्म से पहले ही बँधा हूँ। उस आसक्ति से भयभीत और उससे ऊबकर, मैं आपकी शरण में आया हूँ, मुक्त होने को व्याकुल।” वह समझता था कि भगवान्, संसार को सच्चे भक्त के लक्षण सदा दिखाने को उत्सुक, ने उसे केवल परखने के लिए सांसारिक भोग प्रस्तावित किए थे — क्योंकि जो भगवान् से वरदान माँगता है वह कोई सच्चा सेवक नहीं:

नान्यथा तेऽखिलगुरो घटेत करुणात्मनः ।

यस्त आशिष आशास्ते न स भृत्यः स वै वणिक् ॥ ४ ॥

nānyathā te 'khīla-guro ghaṭeta karuṇātmanaḥ yas ta āśīṣa āśāste na sa bhṛtyaḥ sa vai vaṇik

अर्थ: हे समस्त लोकों के गुरु, हे करुणामय भगवन्, आपके साथ ऐसा हो ही नहीं सकता। जो आपसे वरदान माँगता है वह आपका सेवक नहीं; वह तो मात्र एक व्यापारी है। (SB 7.10.4)



भगवान् बालक प्रह्लाद को कोई भी वरदान माँगने को कहते हैं, किन्तु प्रह्लाद, जुड़े हाथों से, हर सांसारिक उपहार को कोमलता से अस्वीकार कर देता है, यह कहते हुए कि जो वरदान माँगता है वह व्यापारी है, सेवक नहीं (SB 7.10.2-4)।

एकमात्र वरदान जो माँगने योग्य है

तब प्रह्लाद ने भगवान् तथा भक्त के बीच का शुद्ध सम्बन्ध प्रस्तुत किया — किसी सौदे से अछूता एक बन्धन। वह बिना किसी लालसा का भक्त था; भगवान् बिना किसी स्वार्थ के स्वामी थे; और उनके बीच वह गणना कुछ नहीं थी जो एक राजा तथा उसके वेतनभोगी सेवक के बीच होती है।

अहं त्वकामस्त्वद्भक्तस्त्वं च स्वाम्यनपाश्रयः ।

नान्यथेहावयोरर्थो राजसेवकयोरिव ॥ ६ ॥

aham tv akāmas tvad-bhaktas tvaṁ ca svāmy anapāśrayaḥ nānyathehāvayor artho rāja-sevakayor iva

अर्थ: मैं आपका भक्त हूँ, समस्त कामना से रहित, और आप मेरे स्वामी हैं, बदले में कुछ न चाहते हुए। हमारे बीच कोई अन्य स्वार्थ नहीं है, जैसा एक राजा तथा उसके सेवक के बीच होता है। (SB 7.10.6)

और फिर भी, चूँकि भगवान् देने पर आग्रह करते रहे, प्रह्लाद ने वह एकमात्र उपहार माँगा जो हर अन्य कामना का द्वार बन्द कर देता है — कि कामना स्वयं उसके भीतर फिर कभी उत्पन्न न हो:

यदि दास्यसि मे कामान्वरांस्त्वं वरदर्षभ ।

कामानां हृद्यसंरोहं भवतस्तु वृणे वरम् ॥ ७ ॥

*yadi dāsyasi me kāmān varāṁs tvaṁ varadarśabha kāmānām hṛdy asaṁrohaṁ bhavatas tu
vṛṇe varam*

अर्थ: हे वरदान देने वालों में श्रेष्ठ, यदि आप मुझे कोई वरदान देंगे, तो मैं केवल यही माँगता हूँ: कि मेरे हृदय में कोई कामना फिर कभी जड़ न पकड़े। (SB 7.10.7)

क्योंकि कामना के मात्र उदय से, उसने समझाया, व्यक्ति की इन्द्रियाँ, मन, बल, धर्म, बुद्धि, लज्जा तथा सत्य सब खिसक जाते हैं; केवल तभी, जब हृदय में जड़ जमाई कामनाएँ निकाल दी जाती हैं, व्यक्ति दिव्य महिमा के योग्य होता है।

पिता के लिए एक प्रार्थना

भगवान्, प्रसन्न होकर, प्रह्लाद को युग भर अविचल राज-सम्पदा का वचन दिया, और — उससे भी बड़ा — यह कि वह भगवान् को सुनता तथा स्मरण करता रहेगा, यहाँ तक कि समस्त सकाम कर्म त्याग कर अन्ततः उन्हीं के पास लौट आएगा (SB 7.10.11-13)। किन्तु प्रह्लाद की एक और विनती थी — और वह स्वयं के लिए नहीं थी। नतमस्तक होकर, उसने दोष को छिपाया नहीं अपितु स्पष्ट कहा: उसके पिता ने, भगवान् की सच्ची महिमा को न जानते हुए, उन्हें अपने भाई का वधकर्ता मानकर क्रोधवश उनकी निन्दा की थी, और उसी अन्धे क्रोध में भगवान् के भक्त प्रह्लाद के साथ भी अन्याय किया था।

श्रीप्रह्लाद उवाच

वरं वरय एतत्ते वरदेशान्महेश्वर ।

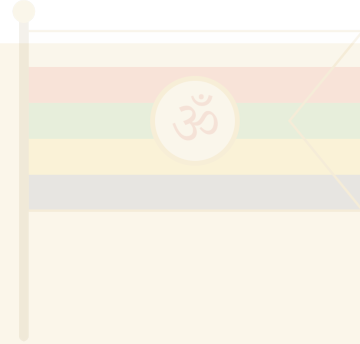
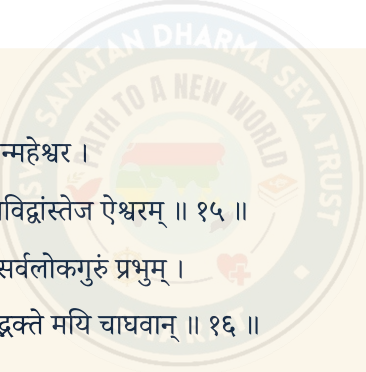
यदनिन्दत्पिता मे त्वामविद्वांस्तेज ऐश्वरम् ॥ १५ ॥

विद्धामर्षशयः साक्षात्सर्वलोकगुरुं प्रभुम् ।

भ्रातृहेति मृषादृष्टिस्त्वद्भक्ते मयि चाधवान् ॥ १६ ॥

तस्मात्पिता मे पूयेत दुरन्ताद् दुस्तरादघात् ।

पूतस्तेऽपाङ्गसंदृष्टस्तदा कृपणवत्सल ॥ १७ ॥



*śrī-prahrāda uvāca varaṁ varaya etat te varadeśān maheśvara yad anindat pitā me tvām
avidvāṁs teja aiśvaram*

*viddhāmarṣāśayaḥ sākṣāt sarva-loka-gurum prabhum bhrātṛ-heti mṛṣā-dṛṣṭis tvad-bhakte mayi
cāghavān*

tasmāt pitā me pūyeta durantād dustarād aghāt pūtas te 'pāṅga-saṁdṛṣṭas tadā kṛpaṇa-vatsala

अर्थ: प्रह्लाद ने कहा: हे परमेश्वर, मुझे केवल यही वरदान दें: मेरे पिता ने आपकी सच्ची शक्ति को न जानते हुए क्रोधवश आपकी निन्दा की, आपको अपने भाई का वधकर्ता मान बैठे, और उसी भ्रम में मुझ आपके भक्त के साथ भी अन्याय किया। हे पतितों पर करुणा करने वाले, इस अपराध के लिए, अपनी करुणामयी दृष्टि से उन्हें पवित्र कर दीजिए। (SB 7.10.15-17)

भगवान् ने उत्तर दिया कि हिरण्यकशिपु पहले ही पवित्र हो चुका है — वस्तुतः प्रह्लाद के जन्म ने उसके कुल की इक्कीस पीढ़ियों को पवित्र कर दिया है। जहाँ भी ऐसे शान्त, महान-हृदय भक्त जन्म लेते हैं, उन्होंने कहा, वह भूमि ही पवित्र हो जाती है।



प्रह्लाद स्वयं के लिए नहीं अपितु अपने पिता की क्षमा के लिए प्रार्थना करता है, और भगवान् उसे आश्चस्त करते हैं कि उसके जन्म ने उसके समूचे कुल को पवित्र कर दिया है

(SB 7.10.15-19)।

आदर्श भक्त

तब भगवान् ने प्रह्लाद को वह सम्मान प्रदान किया जो समूची कथा का मुकुट है: कि जो उसके मार्ग का अनुसरण करेंगे वे भगवान् के अपने भक्त बनेंगे, और यह कि प्रह्लाद स्वयं समस्त काल के लिए भक्ति का ही आदर्श खड़ा रहेगा।

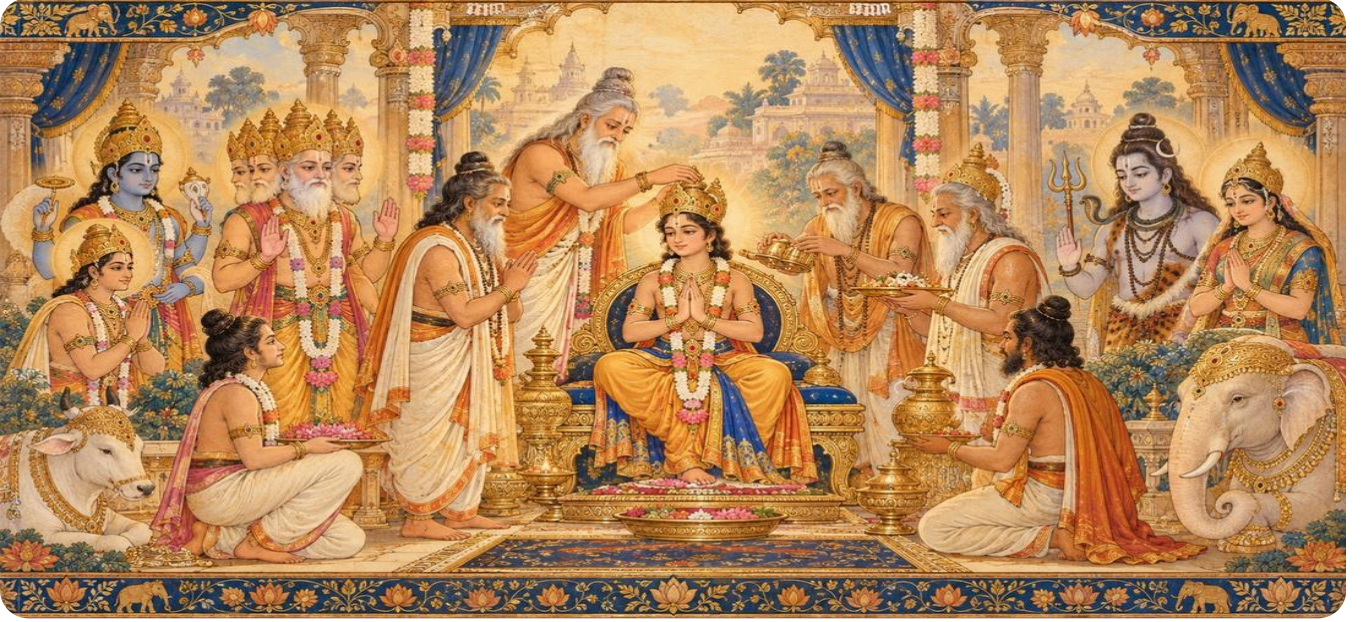
भवन्ति पुरुषा लोके मद्भक्तास्त्वामनुव्रताः ।

भवान्मे खलु भक्तानां सर्वेषां प्रतिरूपधृक् ॥ २१ ॥

*bhavanti puruṣā loke mad-bhaktās tvām anuvratāḥ bhavān me khalu bhaktānām sarveṣām
pratirūpa-dhṛk*

अर्थ: इस संसार में जो तुम्हारे उदाहरण का अनुसरण करेंगे वे मेरे भक्त बनेंगे। वस्तुतः, तुम मेरे समस्त भक्तों के आदर्श होगे। (SB 7.10.21)

इससे पहले ही भगवान् ने वह गुण बता दिया था जो ऐसी भक्ति को सम्भव बनाता है: क्योंकि प्रह्लाद का हृदय केवल उन्हीं में स्थिर था, वह अब किसी भी प्राणी को ऊँच या नीच नहीं देख सकता था, और किसी के प्रति ईर्ष्या उसमें स्थान नहीं पा सकती थी (SB 7.10.20)। भगवान् ने प्रह्लाद से अपने पिता के अन्त्येष्टि-संस्कार करने को कहा, जो ऐसे महान पुत्र के कारण उच्च लोकों को प्राप्त होगा, और अपने पिता का सिंहासन स्वीकार करने को, अपने मन को सदा उन्हीं में स्थिर रखते हुए राज्य करने को। प्रह्लाद ने भगवान् के आदेशानुसार अन्तिम संस्कार सम्पन्न किए और श्रेष्ठ ऋषियों द्वारा दैत्यों के राजा के रूप में उसका राज्याभिषेक हुआ, जबकि ब्रह्मा तथा देवताओं ने अपने आशीर्वाद दिए।



ऋषियों द्वारा प्रह्लाद का दैत्यों के राजा के रूप में राज्याभिषेक होता है, ब्रह्मा तथा देवगण अपने आशीर्वाद देते हुए, वह एक भक्त-राजा तथा सबके लिए आदर्श के रूप में अपना स्थान ग्रहण करता है (SB 7.10.22-34)।

छिपी हुई कथा

अन्तर्धान होने से पूर्व, भगवान् ने कोमलता से ब्रह्मा को निर्देश दिया कि वे क्रूरों को ऐसे वरदान और न दें, क्योंकि क्रूर को दिया गया उपहार सर्पों को पिलाए गए दूध के समान है। फिर, ब्रह्मा द्वारा पूजित होकर, भगवान् उसी स्थान से अन्तर्धान हो गए। नारद ने समूची कथा के पीछे का रहस्य प्रकट करते हुए वृत्तान्त समाप्त किया। हिरण्यकशिपु तथा उसका भाई हिरण्याक्ष, वस्तुतः, भगवान् के अपने धाम के दो द्वारपाल जय तथा विजय के अतिरिक्त और कोई नहीं थे, जिन्हें ऋषियों ने संसार में जन्म लेने का शाप दिया था। जन्म-दर-जन्म — उन असुरों के रूप में, फिर श्रीराम द्वारा मारे गए रावण तथा कुम्भकर्ण के रूप में, फिर श्रीकृष्ण के युग में शिशुपाल तथा दन्तवक्त्र के रूप में — वे बार-बार लौटे, और अपने स्मरण की तीव्रता से ही, शत्रुता में भी, अन्ततः भगवान् में विलीन हो गए। जैसे एक इल्ली भ्रमर के निरन्तर चिन्तन से भ्रमर बन जाती है, वैसे ही ये आत्माएँ, शत्रु रूप में भी अपने मन को भगवान् में स्थिर किए, अन्त में उन्हें प्राप्त हो गई।

भगवान् के प्रति घृणा भी अन्ततः उन्हीं तक क्यों ले जाती है? क्योंकि भगवान् वह एकमात्र सत्य हैं जिसमें प्रत्येक आत्मा को टिकना ही है, और मन का उनमें लीन होना चाहे प्रेम का रूप ले, चाहे भय का, चाहे क्रोध का — वह मन का उन्हीं पर, और किसी अन्य पर नहीं, टिकना ही है (SB 7.10.38-40)। यही कारण है कि जय तथा विजय, जन्म-दर-जन्म उनके विरोधी बनने को शापित होकर भी, वास्तव में उनसे कभी बच नहीं पाए: उनकी शत्रुता ने ही उनके विचारों को भगवान् के रूप से बाँधे रखा। किसी भक्त को कभी घृणा द्वारा भगवान् को खोजने की सलाह नहीं दी जाती — वह मार्ग केवल भगवान् की अपनी व्यवस्था से, उन्हीं की आत्माओं के लिए, खुलता है। यह जो शिक्षा देता है वह है अखण्ड स्मरण का मूल्य: वही निरन्तरता जिसने हिरण्यकशिपु को विरोध में बाँधा था, प्रेम की ओर मुड़कर, वही वस्तु है जो प्रह्लाद ने माँगी थी जब उसने प्रार्थना की कि भगवान् के अतिरिक्त कुछ भी उसके हृदय में जड़ न पकड़े।



ब्रह्मा तथा देवताओं द्वारा पूजित होकर, भगवान् प्रह्लाद को आशीर्वाद देते हैं और दृष्टि से अन्तर्धान हो जाते हैं, नृसिंह रूप में प्रकट होने का उनका प्रयोजन पूर्ण हो गया (SB 7.10.25-31)।

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. सच्चा भक्त बदले में कुछ नहीं माँगता। प्रह्लाद हर सांसारिक वरदान अस्वीकार कर देता है; जो पुरस्कार के लिए भगवान् की सेवा करता है, वह कहता है, वह व्यापारी है, सेवक नहीं। जो प्रेम मजदूरी चाहता है वह अभी प्रेम नहीं (SB 7.10.4-6)।
2. सर्वोच्च उपहार कामना से मुक्ति है। प्रह्लाद जो एकमात्र वरदान माँगता है वह यह है कि कामना उसके हृदय में फिर कभी जड़ न पकड़े — क्योंकि कामना हर पतन का स्रोत है, और उसका अभाव दिव्य महिमा का द्वार (SB 7.10.7-9)।
3. भक्ति दूसरों को क्षमा करती और उठाती है। अपने आशीर्वाद के पश्चात् प्रह्लाद का पहला विचार अपने पिता की क्षमा है। एक सन्त का जन्म समूचे कुल को पवित्र कर देता है, और सच्ची भक्ति सदा दया में बाहर की ओर मुड़ती है (SB 7.10.15-19)।
4. प्रह्लाद भक्त का आदर्श है। भगवान् स्वयं प्रह्लाद को आने वाले समस्त भक्तों का प्रतिमान घोषित करते हैं — कामनारहित, विनम्र, क्षमाशील, और पूर्णतः समर्पित (SB 7.10.21)।
5. भगवान् में स्थिर हृदय में ईर्ष्या को स्थान नहीं होता। क्योंकि उसकी भक्ति ने कोई प्रतिद्वन्द्वी विषय स्वीकार नहीं किया, प्रह्लाद अब किसी भी प्राणी को अपने से नीच या ऊँच नहीं देख सकता था (SB 7.10.20)।
6. भगवान् के प्रति शत्रुता भी, यदि अखण्ड तीव्रता से धारण की जाए, तो अन्ततः उन्हीं तक पहुँचा सकती है। जय तथा विजय जन्म-दर-जन्म भगवान् के शत्रु बनकर लौटे — हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष, फिर रावण तथा कुम्भकर्ण, फिर शिशुपाल तथा दन्तवक्त्र — और क्योंकि उनका मन कभी उनसे दूर नहीं हुआ, अन्ततः वे उन्हीं में लीन हो गए; भक्त के लिए शिक्षा यही है कि वही निरन्तरता प्रेम के माध्यम से प्राप्त करे (SB 7.10.35-40)।

एक भाक्तेपूर्ण चिन्तन

प्रह्लाद के इनकार में कुछ लगभग चौंका देने वाला है। विश्व के भगवान् द्वारा कुछ भी दिए जाने पर, वह कुछ नहीं चाहता — और जो कारण वह देता है वह मर्मभेदी रूप से ईमानदार है: वह अपने हृदय को जानता है। वह जानता है कि सुख माँगना उसी आसक्ति को पोषित करना होगा जिससे बचने वह आया है, और यह कि जो भगवान् से सौदा करता है, अच्छी वस्तुओं के लिए भी, उसने चुपके से प्रेम को व्यापार बना दिया है। अतः वह इसके बजाय वह एकमात्र उपहार माँगता है जो अन्य सबको अनावश्यक बना देता है: एक ऐसा हृदय जिसमें कामना अब उग नहीं सकती। यही उसकी शान्ति का रहस्य है। और ध्यान दें कि उसकी स्वतन्त्रता उसे कहाँ ले जाती है — आत्म-तृप्ति की ओर नहीं, अपितु सीधे अपने पिता की चिन्ता की ओर, उसी व्यक्ति की जिसने उसे मारने का प्रयास किया था। लालसा से रिक्त हृदय में दूसरों के लिए स्थान होता है; अपनी भूख से क्षमा पाया हृदय क्षमा कर सकता है। प्रह्लाद हमें दिखाता है कि भक्ति का शिखर भगवान् से अधिक पाना नहीं, अपितु भगवान् के अतिरिक्त कुछ न चाहना है, और उस पूर्णता को समस्त के प्रति दया के रूप में बाहर ले जाना।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज अपनी प्रार्थना में भगवान् से अधिक के बजाय कम माँगें। इच्छाओं की सूची प्रस्तुत करने के बजाय, प्रह्लाद के भाव में एक सरल विनती अर्पित करें — कि आपका हृदय उस अशान्त लालसा से मुक्त हो जो कभी तृप्त नहीं करती, और इसके बजाय भगवान् के प्रेम से भर जाए। ऐसा करते हुए, भीतर दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” फिर, प्रह्लाद की भाँति, उस शान्ति को क्षमा में उमड़ने दें: किसी ऐसे को मौन रूप से क्षमा करें जिसने आपके साथ अन्याय किया हो, और भगवान् के सम्मुख उसका कल्याण चाहें।

उपसंहार

यह अध्याय भक्त की एक कसौटी पीछे छोड़ जाता है: कुछ भी दिए जाने पर, प्रह्लाद केवल यही माँगता है कि कामना उसके हृदय को फिर कभी न छुए, और फिर उसी स्वतन्त्रता को उस पिता पर दया में लगा देता है जिसने उसके साथ अन्याय किया था। नारद का अन्तिम वचन उसी सत्य को और आगे ले जाता है — कि जो आत्माएँ जन्म-दर-जन्म भगवान् का विरोध करती रहीं, वे भी अपने स्मरण की निरन्तरता से अन्ततः उन्हीं के पास लौट आईं। यह अध्याय हमसे जो माँगता है वह सरल नहीं, अपितु विशाल है: भगवान् के अतिरिक्त कुछ न चाहना, और उन्हें हृदय में इतनी दृढ़ता से थामे रहना कि कुछ भी — न कामना, न पुराने घाव, न शत्रुता भी — मन को उनसे विचलित न कर सके।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), सप्तम स्कन्ध, दशम प्रवचन, पृष्ठ 698–704।
- शृंखला: Srīmad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा संबद्धता या समर्थन का कोई अभिप्राय नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-7-chapter-10-prahlada-the-best-of-devotees-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

